।। ॐ श्रीपरमात्मने नमः ।।

एक संतकी अमूल्य शिक्षा

(क्या करें, क्या न करें?)

परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराज
के वचनोंसे संगृहीत

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

एक सन्तकी

अमूल्य शिक्षा

[क्या करें, क्या न करें ?]

[परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजके
वचनोंसे संगृहीत]

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

संकलन-सम्पादन—
राजेन्द्र कुमार धवन

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

विषय-सूची

विषय	*पृष्ठ-संख्या*
१. भगवत्सम्बन्धी कार्य	१
२. प्रणाम	४
३. प्रातःकालके कार्य	४
४. खान-पान	५
५. शयन	६
६. साधुओंके लिये उपयोगी	७
७. गृहस्थके लिये उपयोगी	८
८. स्त्रियोंके लिये उपयोगी	९
९. बालकोंके लिये उपयोगी	११
१०. गायके प्रति कर्तव्य	१२
११. शुभाशुभ	१३
१२. रोग और आरोग्य	१४
१३. रोगीके प्रति कर्तव्य	१५
१४. मरणासन्नके प्रति कर्तव्य	१६
१५. मृतात्माके प्रति कर्तव्य	१६
१६. कर्तव्यका निर्णय	१७
१७. प्रकीर्ण	१८
१८. अमृत-बिन्दु	१९
१९. परमश्रद्धेय श्रीस्वामीजी महाराजके जीवनसे प्राप्त शिक्षाएँ	२१

===::0::===

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

एक सन्तकी अमूल्य शिक्षा

[क्या करें, क्या न करें ?]

भगवत्सम्बन्धी कार्य

१. एक ही सिद्धान्त, एक ही इष्ट, एक ही मन्त्र, एक ही माला, एक ही समय, एक ही आसन तथा एक ही स्थान हो तो जल्दी सिद्धि होती है।

२. जिस आसनपर बैठकर ध्यान आदि किया जाय, वह आसन अपना होना चाहिये, दूसरेका नहीं; क्योंकि दूसरेका आसन काममें लिया जाय तो उसमें वैसे ही परमाणु रहते हैं। इसी तरहसे गोमुखी, माला, सन्ध्याके पञ्चपात्र, आचमनी आदि भी अपने अलग रखने चाहिये। शास्त्रोंमें तो यहाँतक विधान आया है कि दूसरोंके बैठनेका आसन, पहननेकी जूती, खड़ाऊँ, कुर्ता आदिको अपने काममें लेनेसे अपनेको दूसरेके पाप-पुण्यका भागी होना पड़ता है।

३. कलियुगमें कोई अपना उद्धार करना चाहे तो राम तथा कृष्णकी प्रधानता है, और सिद्धियाँ प्राप्त करना चाहे तो शक्ति तथा गणेशकी प्रधानता है—'**कलौ चण्डीविनायकौ**'।

४. भक्तोंके नामसे भगवान् राजी होते हैं। शंकरजीके मन्दिरमें घण्टाकर्ण आदिका, रामजीके मन्दिरमें हनुमान्, शबरी आदिका नाम लो। शंकरजीके मन्दिरमें रामायणका पाठ करो। रामजीके मन्दिरमें शिवताण्डव, शिवमहिम्नः आदिका पाठ करो। वे राजी हो जायँगे।

५. हनुमान्‌जीको प्रसन्न करना हो तो उन्हें रामायण सुनाओ। रामायण सुननेसे वे बड़े राजी होते हैं।

६. अपने कल्याणकी इच्छा हो तो 'पंचमुखी अथवा वीर हनुमान्' की उपासना न करके 'दास हनुमान्' की उपासना करनी चाहिये।

७. शिवजीका मन्त्र रुद्राक्षकी मालासे जपना चाहिये, तुलसीकी मालासे नहीं।

८. हनुमान्‌जी और गणेशजीको तुलसी नहीं चढ़ानी चाहिये।

९. गणेशजी बालरूपमें हैं। अतः उन्हें लड्डू और लाल वस्त्र बड़े प्रिय लगते हैं।

१०. दशमी-विद्धा एकादशी त्याज्य होती है, पर गणेशचतुर्थी तृतीया-विद्धा श्रेष्ठ होती है।

११. देवीकी उपासना करनेवाले पुरुषको कभी स्त्रीपर क्रोध नहीं करना चाहिये। क्रोध करनेसे उस स्त्रीका अनिष्ट होगा; वह पागल हो जायगी अथवा मर जायगी।

१२. अगर देवीकी उपासना करनेवाले देवीकी कृपा चाहते हों तो वे कुँआरी छोटी-छोटी कन्याओंको भोजन कराएँ, मिठाई खिलाएँ। इससे देवी बहुत प्रसन्न होती है।

१३. यदि कोई नियम लेना चाहे तो प्रतिदिन गीताजीका एक अध्याय, रामायणके नौ दोहे और हनुमानचालीसाका एक पाठ करनेका नियम तो लेना ही चाहिये।

१४. पीपल, आँवला और तुलसी—इनकी भगवद्भावपूर्वक पूजा करनेसे वह भगवान्‌की पूजा हो जाती

है।

१५. जहाँतक शंख और घण्टेकी आवाज जाती है, वहाँतक नीरोगता, शान्ति, धार्मिक भाव फैलते हैं।

१६. घरमें एक बित्तेसे अधिक ऊँची भगवान्‌की प्रतिमा नहीं रखनी चाहिये, चाहे उसका पूजन करें या न करें। यदि प्रतिमामें भगवद्‌बुद्धि है तो उसे सजावटके लिये भी घरमें न रखें। अगर उसमें भगवद्‌बुद्धि नहीं है तो वह एक खिलौनेकी तरह है, उसे रखनेमें दोष नहीं है; जैसे, ऊँचा मकान होनेका दोष नहीं लगता। अगर घरमें एक बित्तेसे अधिक बढ़ी प्रतिमा हो तो उसे किसी मन्दिरमें पुजारीको दे देना चाहिये।

१७. मन्दिरके भीतर स्थित प्राण-प्रतिष्ठित मूर्तिके दर्शनका जो माहात्म्य है, वही माहात्म्य मन्दिरके शिखरके दर्शनका भी है।

१८. शिवलिंगपर चढ़ा पदार्थ ही निर्माल्य अर्थात् त्याज्य है। जो पदार्थ शिवलिंगपर नहीं चढ़ा, वह निर्माल्य नहीं है। द्वादश ज्योतिर्लिंगोंपर चढ़ा पदार्थ भी निर्माल्य नहीं है।

१९. जिस मूर्तिकी प्राण-प्रतिष्ठा हुई हो, उसीमें सूतक लगता है। अतः उसकी पूजा ब्राह्मणसे अथवा विवाहित बहन-बेटीसे करानी चाहिये। परन्तु जिस मूर्तिकी प्राण-प्रतिष्ठा नहीं की गयी हो, उसमें सूतक नहीं लगता। कारण कि प्राण-प्रतिष्ठाके बिना ठाकुरजी घरके सदस्यकी तरह ही हैं; अतः उनका पूजन सूतकमें भी किया जा सकता है।

२०. घरमें जो मूर्ति हो, उसका चित्र अपने पास रखें। कभी बाहर जाना पड़े तो उस चित्रकी पूजा करें। किसी कारणवश मूर्ति खण्डित हो जाय तो उस अवस्थामें भी उस चित्रकी ही पूजा करें।

२१. घरमें रखी ठाकुरजीकी मूर्तिमें प्राण-प्रतिष्ठा नहीं करानी चाहिये।

२२. उपासक भगवान्‌की मूर्तिको तो स्नान करा सकता है, पर चित्रको स्नान नहीं करा सकता; क्योंकि स्नान करानेसे कागज गल जायगा। अतः चित्रको स्नान कराना हो तो उसके सामने एक दर्पण रख दे और उस दर्पणपर पड़नेवाले प्रतिबिम्बको स्नान कराये, तिलक आदि करे।

२३. कभी मनमें अशान्ति, हलचल हो तो पन्द्रह-बीस मिनट बैठकर राम-नामका जप करो अथवा गीताके '**आगमापायिनोऽनित्याः**' (१५। ७)—इस पदका जप करो तो हलचल मिट जायगी।

२४. कोई आफत आ जाय तो दस-पन्द्रह मिनट बैठकर नामजप करो और प्रार्थना करो तो रक्षा हो जायगी। सच्चे हृदयसे की गयी प्रार्थनासे तत्काल लाभ होता है।

२५. नामजपसे बहुत रक्षा होती है। गोरखपुरमें प्रति बारह वर्ष प्लेग आया करता था। भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारने वहाँ एक वर्षतक अखण्ड नामजप कराया तो फिर प्लेग नहीं आया।

२६. कोई रात-दिन राम-राम करना शुरू कर दे तो उसके पास अन्न, जल, वस्त्र आदिकी कमी नहीं रहेगी।

२७. मुखसे नामजप करना और नाम लिखना—दोनोंमें नाम लिखना बढ़िया है। कारण कि लिखनेमें हाथ भी लग जाता है, नेत्र भी लग जाते हैं और मन भी लग जाता है। जितना मन लगेगा, उतना साधन बढ़िया होगा। जितना आपका सम्बन्ध अधिक होगा, उतनी उपासना तेज हो जायगी।

२८. प्रह्लादजीकी तरह एक नामजपमें लग जाय तो कोई जादू-टोना, अभिचार, मूठ आदि काम नहीं करते।

२९. रामरक्षास्तोत्र, हनुमानचालीसा, सुन्दरकाण्डका पाठ करनेसे अनिष्ट मन्त्रोंका (मारण-मोहन आदि तान्त्रिक प्रयोगोंका) असर नहीं होता। परन्तु इसमें बलाबल काम करेगा।

३०. मुसलमानलोग पेशाबको बहुत ज्यादा अशुद्ध मानते हैं। अतः गोमूत्र पीनेसे अथवा स्वमूत्र या गोमूत्र छिड़कनेसे मुस्लिम तन्त्रका प्रभाव कट जाता है।

३१. कार्यसिद्धिके लिये अपने इष्टदेवसे प्रार्थना करना तो ठीक है, पर उनपर दबाव डालना, उनको शपथ या दुहाई देकर कार्य करनेके लिये विवश करना, उनसे हठ करना सर्वथा अनुचित है। उदाहरणके लिये, 'बजरंगबाण' में हनुमान्‌जीपर ऐसा ही अनुचित दबाव डाला गया है; जैसे—***'इन्हें मारु तोहि सपथ राम की', 'सत्य होहु हरि सपथ पाइ कै', 'जनकसुता हरिदास कहावौ। ता की सपथ विलंब न लावौ॥', 'उठ उठ चलु तोहि राम दोहाई'***। इस तरह दबाव डालनेसे इष्टदेव प्रसन्न नहीं होते, उल्टे नाराज होते हैं, जिसका पता बादमें लगता है। इसलिये मैं 'बजरंगबाण' के पाठके लिये मना किया करता हूँ। 'बजरंगबाण' गोस्वामी तुलसीदासजीकी रचना नहीं है। वे ऐसी रचना कर ही नहीं सकते।

३२. भगवन्नामका जप-कीर्तन करनेसे अथवा कर्कोटक, दमयन्ती, नल और ऋतुपर्णका नाम लेनेसे कलियुग असर नहीं करता*।

३३. नल-दमयन्तीकी कथा कलियुगका प्रभाव दूर करनेवाली है। इसलिये हरेक भाई-बहनको नल-दमयन्तीकी कथा पढ़नी चाहिये। इससे बुद्धि शुद्ध होगी तथा कलियुगका असर नहीं होगा।

३४. श्रीरामचरितमानस एक प्रसादिक ग्रन्थ है। जिसको केवल वर्णमालाका ज्ञान हो, वह भी यदि अँगुली रखकर रामायणके एक-दो पाठ कर ले तो उसको पढ़ना आ जायगा और वह अन्य पुस्तकें भी पढ़ना शुरू कर देगा।

३५. रामायणके एक सौ आठ पाठ करनेसे भगवान्‌के साथ विशेष सम्बन्ध जुड़ता है।

३६. रामायणका नवाह्न पारायण आरम्भ करनेके बाद सूआ-सूतक हो जाय तो कोई दोष नहीं लगता।

३७. कमरदर्द आदिके कारण कोई लेटकर पाठ करना चाहे तो कर सकता है। भावका मूल्य है। भाव पाठमें रहना चाहिये, शरीर चाहे जैसे रहे। शरीर (नाशवान्)-का क्या मूल्य है!

३८. किसी स्तोत्रका माहात्म्य हरेक बार पढ़नेकी जरूरत नहीं है। आरम्भ और अन्तमें एक बार पढ़ लेना चाहिये।

३९. सृष्टिकी प्रत्येक वस्तुका एक मालिक होता है, जिसे 'अधिष्ठातृदेवता' कहते हैं। कुएँका भी अधिष्ठातृदेवता होता है। यदि कुआँ चलानेसे पहले उसके अधिष्ठातृदेवताका पूजन किया जाय, उसको प्रणाम किया जाय अथवा उसका नाम लिया जाय तो वह कुएँकी विशेष रक्षा करता है, कुएँके कारण कोई नुकसान नहीं होने देता। ऐसे ही वृक्ष आदिका भी अधिष्ठातृदेवता होता है। रात्रिमें किसी वृक्षके नीचे रहना पड़े तो उसके अधिष्ठातृ-देवतासे प्रार्थना करें कि 'हे वृक्षदेवता! मैं आपकी शरणमें हूँ, आप मेरी रक्षा करें' तो रात्रिमें रक्षा होती है।

४०. अगर जनेऊ धारण नहीं किया हो तो सन्ध्या तथा गायत्रीका जप नहीं करना चाहिये। लोग समझते हैं कि हम गायत्रीके जपसे बड़े हो जायँगे। पर वे गायत्री-जपसे कभी बड़े नहीं होंगे!

---

* **कर्कोटकस्य नागस्य दमयन्त्या नलस्य च। ऋतुपर्णस्य राजर्षेः कीर्तनं कलिनाशनम्॥**

(महाभारत, वन० ७९। १०)

गायत्री-जप द्विजातिके लिये टैक्स है। टैक्स देना क्या बड़ी बात है? टैक्स देनेवाला बड़ा आदमी नहीं होता। भगवान्‌का भजन करनेवाला बड़ा होता है।

४१. चोटीका पितृलोकके साथ सम्बन्ध है। चोटी नहीं होगी तो माँ-बापको पिण्ड-पानी नहीं मिलेगा! शास्त्रोंमें लिखा है कि स्नान, दान, जप, होम, सन्ध्या और देवपूजनके समय चोटीमें गाँठ अवश्य लगानी चाहिये। चोटीके बिना किये गये ये पुण्यकर्म निष्फल हो जाते हैं।

प्रणाम

१. रोजाना प्रातः बड़ोंको नमस्कार करना चाहिये। जो प्रातः बड़ोंको नमस्कार करते हैं, वे नमस्कार करनेयोग्य हैं!

२. कोई हमें प्रणाम करे तो मनसे उसको भी प्रणाम करना चाहिये और आशीर्वाद न देकर भगवन्नामका उच्चारण करना चाहिये।

३. किसी व्यक्तिसे विरोध हो तो मनसे उसकी परिक्रमा करके प्रणाम करनेसे उसका विरोध मिटता है, द्वेष-वृत्ति मिटती है। इससे हमारा वैर भी मिटेगा। हमारा वैर मिटनेसे उसका भी वैर मिटेगा।

४. कोई व्यक्ति हमसे नाराज हो, हमारे प्रति अच्छा भाव न रखता हो तो प्रतिदिन सुबह-शाम मनसे उसकी परिक्रमा करके दण्डवत् प्रणाम करें। ऐसा करनेसे कुछ ही दिनोंमें उसका भाव बदल जायगा। फिर वह व्यक्ति कभी मिलेगा तो उसके भावोंमें अन्तर दीखेगा। भजन-ध्यान करनेवाले साधकके मानसिक प्रणामका दूसरेपर ज्यादा असर पड़ता है।

५. घरमें सभीको रोजाना अपनेसे बड़ोंके चरणोंमें प्रणाम करना चाहिये। बहनों-माताओंको चाहिये कि वे अपने पतिके सिवाय किसी भी पुरुषके चरण न छुएँ। पिताके समान ससुर आदि दूसरे पुरुषोंको दूरसे जमीनपर माथा टेककर प्रणाम करें। भाइयोंको भी चाहिये कि वे रोजाना अपनी माँके चरणोंमें अपना मस्तक रखकर प्रणाम करें। माँके समान सास आदि दूसरी स्त्रियोंको दूरसे जमीनपर माथा टेककर प्रणाम करें। पुरुष दूसरी स्त्रीको स्पर्श न करे तो उसका तेज बढ़ता है, ब्रह्मचर्य बढ़ता है, शक्ति बढ़ती है, भजन बढ़ता है, शान्ति बढ़ती है और सब तरहसे लाभ होता है।

प्रातःकालके कार्य

१. शौचालयकी छतका कुछ अंश इतना खुला रखना चाहिये, जिसमेंसे आकाश दीख सके। इससे शौचके बाद स्नान करनेकी जरूरत नहीं रहती और शौचालय भी दुर्गन्ध-रहित रहता है। घरमें कम-से-कम एक शौचालय तो ऐसा रहना ही चाहिये।

२. प्रत्येक बार लघुशंका करनेके बाद इन्द्रिय और मुखको ठण्डे जलसे तथा पैरोंको गरम जलसे धोना चाहिये। इससे आयु बढ़ती है।

३. अगर जंगलमें शौच जाना पड़े तो वहाँपर ***'उत्तम भूमि मध्यम काया, उठो देव मैं जंगल आया'***— ऐसा बोलकर शौच जाना चाहिये, नहीं तो वहाँ रहनेवाले देवता तथा भूत-प्रेत कुपित होकर हमारा अनिष्ट कर सकते हैं।

४. प्रतिदिन स्नान करते समय '**गंगे-गंगे**' उच्चारण करनेकी आदत बना लेनी चाहिये। गंगाके इन नामोंका भी स्नान करते समय उच्चारण करना चाहिये—'**ब्रह्मकमण्डुली, विष्णुपादोदकी, जटाशंकरी, भागीरथी, जाह्नवी**'। इन नामोंसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश—तीनोंका स्मरण हो जाता है।

५. प्रतिदिन प्रातः स्नानके बाद गंगाजलका चरणामृत लेना चाहिये। गंगाजल लेनेवाला नरकोंमें नहीं जा सकता।

६. सरदीके दिनोंमें स्नान आदिके लिये गंगाजलको आगपर गरम नहीं करना चाहिये। यदि गरम करना ही हो तो धूपमें रखकर गरम कर सकते हैं। सूतकमें भी गंगा-स्नान कर सकते हैं।

७. सूर्यको अर्घ्य (जल) देनेसे त्रिलोकीको जल देनेका माहात्म्य होता है। प्रातः स्नानके बाद एक ताँबेके लोटेमें जल लेकर उसमें लाल पुष्प या कुंकुम डाल दें और '**श्रीसूर्याय नमः**' अथवा '**एहि सूर्य सहस्त्रांशो तेजोराशे जगत्पते। अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥**' कहते हुए तीन बार सूर्यको जल दें।

खान-पान

१. भोजन प्रेमपूर्वक बनाना चाहिये। प्रेमपूर्वक, भावपूर्वक बनायी हुई रसोई तीन-चार-पाँच दिनतक खराब नहीं होती, सड़ती नहीं, जबकि दूसरी सड़ जाती है। एक बार मुझे खाँसी-जुकाम हो रखा था। एक भाई दही लेकर आया और लेनेके लिये आग्रह करने लगा कि यह तो मैं आपके लिये ही लाया हूँ। मैंने पूछा कि क्या तुमने पूरा विचार कर लिया है? उसने कहा कि हाँ, पूरा विचार कर लिया है। मैंने दही लेकर खा लिया तो मेरी खाँसी मिट गयी! प्रेमपूर्वक दी हुई जड़ चीजमें भी चेतनता, विलक्षणता आ जाती है।

२. सूर्यास्तके बाद दही और उड़द नहीं खाना चाहिये। इनको खानेसे बुद्धि स्थूल तथा क्षीण होती है।

३. रातका जमाया हुआ दही ही काममें लेना चाहिये। दिनका जमा दही नहीं खाना चाहिये।

४. अंकुरित अन्न नहीं खाना चाहिये। कारण कि गेहूँ, बाजरा, चना आदिमें भी प्राण रहते हैं, पर सुप्तरूपसे रहते हैं। उनको पानीमें भिगोया जाय तो एक-दो दिनमें अंकुर निकल आते हैं—यह प्राणोंके जाग्रत् होनेसे होता है। प्राणशक्ति जाग्रत् होनेके कारण उनमें बढ़नेकी क्रिया आरम्भ हो जाती है। इसलिये उनको खानेमें हिंसा होती है।

५. दूसरेको भोजन कराते समय 'रोटी लाऊँ? दाल लाऊँ?' इस प्रकार नहीं पूछना चाहिये, प्रत्युत रोटी, दाल आदि उसके सामने लेकर आना चाहिये, फिर वह ले या न ले, उसकी मरजी। अगर कोई पूछे कि 'रोटी लाऊँ? दाल लाऊँ?' तो सज्जन आदमी 'ना' में ही उत्तर देगा।

६. मांस, अण्डा, सुल्फा, भाँग आदि सभी अशुद्ध और नशा करनेवाले पदार्थोंका सेवन करना पाप है; परन्तु मदिरा पीना महापाप है। मदिरापान करनेवालेको शास्त्रोंमें महापापी कहा गया है। कारण कि मदिरापान मांसाहारसे भी अधिक निन्दनीय और पतन करनेवाला है।

गंगाजी सबको शुद्ध करनेवाली हैं। परन्तु यदि गंगाजीमें मदिराका पात्र डाल दिया जाय तो वह शुद्ध नहीं होता। जब मदिराका पात्र भी (जिसमें मदिरा डाली जाती है) इतना अशुद्ध हो जाता है, तब मदिरा पीनेवाला कितना अशुद्ध हो जाता होगा—इसका कोई ठिकाना नहीं है!

मदिराके निर्माणमें असंख्य जीवोंकी हत्या होती है। मदिरापानसे होनेवाली सबसे भयंकर हानि यह है कि इससे अन्त:करणमें रहनेवाले धर्मके अंकुर नष्ट हो जाते हैं। तात्पर्य है कि मनुष्यके भीतर जो धार्मिक भावनाएँ रहती हैं, धर्मकी रुचि, संस्कार रहते हैं, उनको मदिरापान नष्ट कर देता है। इससे मनुष्य महान् पतनकी तरफ चला जाता है।

७. पान भी एक शृंगार है। यह निषिद्ध वस्तु तो नहीं है, पर ब्रह्मचारी, विधवा और संन्यासीके लिये इसका निषेध है।

८. जैसे प्राणियोंकी वृत्तियोंका पदार्थोंपर असर पड़ता है, ऐसे ही प्राणियोंकी दृष्टिका भी असर पड़ता है। बुरे व्यक्तिकी अथवा भूखे कुत्तेकी दृष्टि भोजनपर पड़ जाती है तो वह भोजन अपवित्र हो जाता है। अब वह भोजन पवित्र कैसे हो? भोजनपर उसकी दृष्टि पड़ जाय तो उसे देखकर मनमें प्रसन्न हो जाना चाहिये कि भगवान् पधारे हैं! अत: उसको सबसे पहले थोड़ा अन्न देकर भोजन करा दे। उसको देनेके बाद बचे हुए शुद्ध अन्नको स्वयं ग्रहण करे तो दृष्टिदोष मिट जानेसे वह अन्न पवित्र हो जाता है।

९. भोजनके पहले दोनों हाथ, दोनों पैर और मुख—ये पाँचों शुद्ध, पवित्र जलसे धो ले। फिर पूर्व या उत्तरकी ओर मुख करके शुद्ध आसनपर बैठकर भोजनकी सब चीजोंको '**पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति। तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मन:**' (गीता ९। २६)—यह श्लोक पढ़कर भगवान्‌के अर्पण कर दे। अर्पणके बाद दायें हाथमें जल लेकर '**ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना**' (गीता ४। २४)—यह श्लोक पढ़कर आचमन करे और भोजनका पहला ग्रास भगवान्‌का नाम लेकर ही मुखमें डाले।

१०. भोजनसे पहले भगवान्‌को अर्पण करनेके उद्देश्यसे जो अन्न अग्निमें डाला जाता है, उसमें नमक नहीं होना चाहिये। करण कि नमक जलसे पैदा होता है और जल अग्निका विरोधी है।

११. भोजन करते समय जितनी देरमें एक ग्रास चबाये, उतनी देरमें दूसरा ग्रास तैयार कर ले। फिर जैसे ही पहला ग्रास समाप्त हो, तुरन्त दूसरा ग्रास ले ले, जिससे थोड़ा-भी समय व्यर्थ न जाय।

१२. भोजन परोसनेवालेको चाहिये कि आरम्भमें एक बार सब चीजें परोसकर फिर दस-पन्द्रह मिनटतक परोसना बन्द कर दे। फिर देखे कि किसकी थालीमें क्या चीज कम है, और वह चीज जाकर परोस दे।

शयन

१. रात्रि सोनेसे पहले अपनी छायाके कण्ठदेशमें देखते हुए तीन बार कह दो कि मुझे प्रात: इतने बजे उठा देना तो ठीक उतने बजे नींद खुल जायगी। पर उस समय जरूर उठ जाना चाहिये।

२. जो मनुष्य रात्रिमें साढ़े ग्यारह बजेसे लेकर बारह बजेतक अथवा ग्यारह बजेसे लेकर एक बजेतक जगकर भगवान्‌का भजन-स्मरण, नामजप करता है, उसको अन्त समयमें मूर्च्छा नहीं आती और भगवान्‌की स्मृति बनी रहती है।

३. सूर्योदय और सूर्यास्तके समय सोना नहीं चाहिये। सूर्योदयके बाद उठनेसे बुद्धि कमजोर होती है, और सूर्योदयसे पहले उठनेसे बुद्धिका विकास होता है। अत: सूर्योदयसे पहले उठ जाओ और सूर्यको नमस्कार करो। यदि आवश्यकता हो तो पीछे भले ही सो जाओ।

साधुओंके लिये उपयोगी

१. साधु होना नया जन्म है। अतः साधुका अपने परिवारसे किंचिन्मात्र भी सम्बन्ध नहीं रहना चाहिये। घरवाले सब-के-सब एक साथ मर जायँ तो भी साधुको चिन्ता-शोक नहीं होने चाहिये। अगर चिन्ता-शोक होते हैं तो वह असली साधु नहीं हुआ। तात्पर्य है कि जो घरवालोंमें मोह रखते हैं, वे असली साधु नहीं है।

२. साधु अपना समय बिल्कुल खाली न जाने दे। वह आध्यात्मिक पुस्तकें पढ़े, पर अपने लाभके लिये पढ़े, दूसरोंको सुनानेके लिये नहीं।

३. साधुके लिये यह बहुत बड़ा कलंक है कि वह अपने खानेके लिये कहे कि अमुक वस्तु बनाओ।

४. साधु स्वादु नहीं होता और स्वादु साधु नहीं होता।

५. साधुकी पहचान तीन जगह होती है—भिक्षामें, आदरमें और निरादरमें।

६. साधुको साधुओंके आश्रममें नहीं जाना चाहिये। कारण कि आश्रममें जानेपर यदि साधु खाली बैठेगा तो आश्रमको वह भार लगेगा, और यदि भाषण देगा तो उसमें अधिक श्रोताओंका आना भी आश्रमको अच्छा नहीं लगेगा, दूसरे साधुओंमें द्वेष होगा।

७. यह कहना गलत है कि साधुको केवल भजन-ध्यान करना चाहिये, अन्य कार्य (सेवा) नहीं करनी चाहिये। आज साधुओंमें साधुता न होनेका कारण है—सेवा न करना।

८. संन्यास लेनेके बाद आश्रम बनाना अथवा आश्रममें रहना नहीं चाहिये, प्रत्युत स्वतन्त्र रहना चाहिये। उसको अपने ऊपर किसी भी प्रकारकी जिम्मेवारी, किसी प्रकारका भार नहीं रखना चाहिये।

९. साधुको 'हमें कुछ भी चाहिये'—यह खाता ही उठा देना चाहिये। साधुके लिये यह बहुत ही खराब बात है। अगर किसी वस्तुकी हमें जरूरत है तो हम साधु क्या हुए?

१०. जो दूसरे दिन पीनेके लिये पानी भी रखे, वह साधु नहीं हो सकता।

११. साधुका नया जन्म होता है। इसलिये साधुकी जाति नहीं मानी जाती, प्रत्युत वे 'अच्युतगोत्र' कहलाते हैं। साधु होनेके बाद जो ब्राह्मणत्वका अभिमान करता है, वह बहुत बड़ी गलती करता है।

१२. संन्यासाश्रममें साधकको कभी भूलकर भी स्त्री और धनके साथ किसी प्रकारका भी सम्बन्ध नहीं जोड़ना चाहिये। इनका संग ही नहीं करना चाहिये।

१३. साधु यदि स्त्री और पैसा—इन दोका स्पर्श न करे तो उसका तेज बढ़ता है।

१४. पैसा रखना और परोपकारके कार्य (अस्पताल, अन्नक्षेत्र आदि पुण्यकर्म) करना साधुओंका काम है ही नहीं। यह काम गृहस्थोंका है।

१५. गीताप्रेस, गोरखपुरके संस्थापक श्रीजयदयालजी गोयन्दका कहते थे कि आजकलके जमानेमें धन और स्त्री—इन दोकी तरफ जिसकी वृत्ति नहीं है, ऐसे (कनक-कामिनीके त्यागी) साधुको महात्मा मानना चाहिये। उसको तत्त्वज्ञान नहीं हुआ, तो भी उसका जीवन्मुक्त महात्माके समान आदर करना चाहिये।

१६. मैंने बचपनमें साधुओंके तथा गृहस्थोंके भी जूठे बर्तन साफ किये हैं। इससे मुझे लाभ हुआ है। जूठे बर्तन साफ करनेसे अन्त:करण बहुत शुद्ध होता है। जितना नीचा काम किया जाय, उतनी ऊँची सेवा होती है और उतना ही अधिक अन्त:करण शुद्ध होता है।

गृहस्थके लिये उपयोगी

१. गृहस्थ हो या साधु, हरेक काममें यह सावधानी रखनी चाहिये कि समय और वस्तु कम-से-कम खर्च हो।

२. घरमें कुत्ता नहीं रखना चाहिये। कारण कि कुत्ता महान् अशुद्ध, अपवित्र होता है। उसके खान-पानसे, स्पर्शसे, जगह-जगह बैठनेसे अपने खान-पानमें, रहन-सहनमें अशुद्धि, अपवित्रता आती है। अपवित्रताका फल भी अपवित्र (नरक आदि) ही होता है।

३. मकान बनानेसे बहुत हिंसा होती है। जीव-जन्तु, कीड़े-मकोड़े, गिलहरी आदि सब खुला फिरते हैं। मकान बनाकर उन बेचारोंकी स्वतन्त्रतामें, उनके आवागमनमें तथा उनके रहनेमें बाधा लगा देते हैं, जो बड़ा भारी पाप है! इसलिये नये मकानकी प्रतिष्ठाका भोजन नहीं करना चाहिये, अन्यथा दोष लगता है।

४. मकानमें पीपलका पौधा लगा हो तो उसको काटना नहीं चाहिये, प्रत्युत जड़सहित उखाड़कर दूसरी सुरक्षित जगहपर लगा देना चाहिये।

५. जहाँतक हो सके, डॉक्टर, वकील और ड्राइवर नहीं बनना चाहिये। कारण कि डॉक्टरकी पढ़ाई करनेमें हिंसा करनी पड़ती है, वकील बननेपर झूठ बोलना पड़ता है और ड्राइवर बननेपर गाड़ीके पहियोंके नीचे आकर असंख्य जीव-जन्तुओंकी हिंसा होती है।

६. कूड़ा-करकट इकट्ठा हो जाय तो उसको जलाना नहीं चाहिये, प्रत्युत नियत जगहपर फेंक देना चाहिये। उसको जलानेसे सैकड़ों जीवों की हत्या होती है।

७. सत्संग, तीर्थ आदिमें जायँ तो वहाँ कितना खर्चा हुआ, इसका हिसाब नहीं रखना चाहिये। कारण कि जब वहाँ दुबारा जानेका मौका आयेगा, तब 'पहले गये तो इतना खर्चा हुआ' इस तरफ ख्याल जायगा तो वहाँ जानेमें बाधा लग जायगी।

८. अच्छा विद्वान् ब्राह्मण मिल जाय तो चाहे कोई समय हो, कोई स्थान हो, उससे पितरोंको श्राद्ध-तर्पण करा देना चाहिये।

९. सन्त-महात्माओंके आसनपर नहीं बैठना चाहिये; क्योंकि उनके आसन, कपड़े आदिको पैरसे छूना भी उनका निरादर करना है, अपराध करना है।

१०. अन्न, जल, वस्त्र और औषध—इन चारोंके दानमें पात्र-कुपात्र आदिका विशेष विचार नहीं करना चाहिये। इनमें केवल दूसरेकी आवश्यकताको ही देखना चाहिये।

११. कर्जदार व्यक्तिको दान-पुण्य करनेका अधिकार नहीं है। इसलिये पहले कर्जा चुकाना चाहिये। हाँ, यदि दान-पुण्य करना ही हो तो अपने रोटी-कपड़ेके खर्चेमेंसे निकालकर करना चाहिये।

१२. यद्यपि कन्या माँके दूधसे ही पली है, माँका ही अन्न खाकर बड़ी हुई है, तथापि उसका विवाह होनेके बाद माँ-बाप, बड़े भाईको उसके घरका अन्न-जल नहीं लेना चाहिये। परन्तु जब उसका

पुत्र हो जाय, तब वे उसके घरका अन्न-जल ले सकते हैं। पितर भी (नानाश्राद्धमें) उसके घरका पिण्ड लेते हैं।

१३. अपने घरोंमें भगवान्‌के चित्रोंकी सजावट करनी चाहिये, भगवान्‌के नाम लिखने चाहिये, जिससे भगवान् याद आते रहें।

१४. पत्नीको पतिका शासन और पतिको पत्नीका शासन स्वीकार करना चाहिये अर्थात् दोनोंको एक-दूसरेके शासनमें रहना चाहिये।

१५. घरमें महाभारत अथवा गरुड़पुराण रखनेमें कोई दोष नहीं है। महाभारतको पढ़नेसे कोई हानि नहीं होती। अमावस्या, पूर्णिमा आदिके दिन महाभारतको पढ़नेका विशेष माहात्म्य बताया गया है। अगर मनमें वहम हो तो पहले शान्तिपर्व और अनुशासनपर्व पढ़ो, फिर शुरूसे महाभारत पढ़ो।

१६. 'तू कर, तू कर' कहनेसे काम-धंधा ज्यादा हो जायगा और आदमी कम हो जायँगे, जिससे नौकर रखना पड़ेगा। पर 'मैं करूँ, मैं करूँ' कहनेसे काम-धंधा कम हो जायगा और आदमी ज्यादा हो जायँगे। 'तू कर, तू कर' कहनेसे लड़ाई हो जायगी और 'मैं करूँ, मैं करूँ' कहनेसे लड़ाई मिट जायगी।

१७. कन्या लक्ष्मीरूप होती है। इसलिये कन्याका तिरस्कार, अपमान नहीं करना चाहिये। जैसे ब्राह्मणको भोजन करानेसे पुण्य होता है, ऐसे ही कन्याको भी भोजन करानेका पुण्य होता है।

१८. भोजन करानेमें नौकरके साथ अथवा मेहमानके साथ भी विषमता नहीं करनी चाहिये।

१९. घरमें प्रेमपूर्वक रहना चाहिये। जिस घरमें कलह, लड़ाई-झगड़ा होता है, वह घर कलियुगका स्थान बन जाता है। उस घरमें सभी आदमी दुःख पाते हैं। आपसमें स्नेह रखनेसे, घरमें मिलकर रहनेसे सब तरहका लाभ होता है। घरमें शान्ति, आनन्द रहता है। आपसमें प्रेम रखनेसे घरमें लक्ष्मी बढ़ती है और घरमें कलह होनेसे लक्ष्मी नष्ट हो जाती है।

२०. जो अपने स्त्री-बच्चोंका पालन नहीं कर सकता, उसको विवाह कभी नहीं करना चाहिये। अपनी भुजाओंके बलपर विवाह करना चाहिये। यदि अपनी स्त्री और बच्चोंका पालन करनेकी शक्ति नहीं है तो विवाह करनेका कोई अधिकार नहीं है। दूसरा मेरी सहायता करे, यह आशा बिल्कुल नहीं रखनी चाहिये।

२१. पति दान दे तो पत्नीको पता न चले और पत्नी दान दे तो पतिको पता न चले—यह गुप्त दान नहीं होता, प्रत्युत चोरी होती है! गुप्त दान तो वह होता है कि दान लेनेवालेको पता न चले कि कहाँसे आया? घरवालोंसे छिपाकर देना चोरी है, जिसका दण्ड होगा।

स्त्रियोंके लिये उपयोगी

१. कन्याएँ प्रतिदिन सुबह-शाम सात-सात बार 'सीता माता' और 'कुन्ती माता' नामोंका उच्चारण करें तो वे पतिव्रता होती हैं।

२. विवाहसे पहले लड़के-लड़कीका मिलना व्यभिचार है। इसको मैं बड़ा पाप मानता हूँ।

३. माताएँ-बहनें अशुद्ध अवस्थामें (मासिकधर्मके समय) भी राम-नाम लिख सकती हैं, पर गीता,

रामायण आदिका पाठ बिना पुस्तकके करना चाहिये। यदि आवश्यक हो तो उन दिनोंके लिये अलग पुस्तक रख लेनी चाहिये।

४. अशुद्ध अवस्थामें माताएँ तुलसीकी मालासे जप न करके काठकी मालासे जप करें, और गंगाजीमें स्नान न करके गंगाजल मँगाकर स्नानघरमें स्नान करें।

५. तुलसीकी कण्ठी और ताबीजी-गीताको अशुद्ध अवस्थामें उतारनेकी जरूरत नहीं है। इनको तो हर समय गलेमें रखना चाहिये।

६. स्त्रियोंको रुद्राक्षकी माला धारण नहीं करनी चाहिये। वे तुलसीकी माला धारण करें।

७. हनुमान्‌जीकी, शालग्रामजीकी और शिवलिंगकी उपासना स्त्रियोंके लिये निषिद्ध है। स्त्रियोंको इन तीनोंका स्पर्श भी कदापि नहीं करना चाहिये। वे शिवलिंगकी पूजा न करके शिवमूर्तिकी पूजा कर सकती हैं। परन्तु जो इनका भक्त हो, उसके लिये निषेध नहीं है। कारण कि जहाँ प्रेमभाव मुख्य होता है, वहाँ विधि-निषेध गौण हो जाता है।

८. बहनों-माताओंके लिये हनुमान्‌जीका स्पर्श करना तो मना है, पर हनुमानचालीसा और सुन्दरकाण्डका पाठ करनेकी मना नहीं है।

९. अशुद्ध अवस्थामें हनुमानचालीसाका पाठ स्वयं न करके पतिसे कराना चाहिये।

१०. गर्भपात महापाप है। इससे बढ़कर कोई पाप नहीं है। गर्भपात करनेवालेकी अगले जन्ममें कोई सन्तान नहीं होती। जिस घरमें गर्भपात हुआ हो, उस घरकी भिक्षा हम नहीं लेते। उनका अन्न खानेसे बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। हम जहाँ जाते हैं, वहाँ कह देते हैं कि जिस घरमें एक भी स्त्रीने गर्भपात किया हो, उस घरका अन्न हमारे पास बिलकुल नहीं आना चाहिये। उसका पानी पीना भी पाप है।

११. भगवान्‌की जय बोलने अथवा किसी बातका समर्थन करनेके समय केवल पुरुषोंको ही अपने हाथ ऊँचे करने चाहिये, स्त्रियोंको नहीं।

१२. स्त्रियोंके लिये गायत्री-जप और जनेऊ-धारण करनेका निषेध है। जनेऊके बिना ब्राह्मणको भी गायत्री-जप करनेका अधिकार नहीं है। शरीर मल-मूत्र पैदा करनेकी मशीन है। उसकी महत्ताको लेकर स्त्रियोंको गायत्री-जपका अधिकार देना अधिकार नहीं है, प्रत्युत धिक्कार है! यह कल्याणका रास्ता नहीं है, प्रत्युत केवल अभिमान बढ़ानेके लिये है। कल्याण चाहनेवाली स्त्री गायत्री-जप नहीं करेगी।

स्त्रीके लिये गायत्री-जपका निषेध करके उसका तिरस्कार नहीं किया है, प्रत्युत उसको आफतसे छुड़ाया है! गायत्री-जपसे ही कल्याण होता हो—यह बात है ही नहीं। राम-नामका जप गायत्रीसे कम नहीं है। *[सबको समान अधिकार प्राप्त हो जाय, सब बराबर हो जायँ—ऐसी बातें कहने-सुननेमें तो बड़ी अच्छी लगती हैं, पर आचरणमें लाकर देखो तो पता लगे! सब गड़बड़ हो जायगा! मेरी बातें आचरणमें ठीक होती हैं।]*

१३. पतिके साधु होनेपर पत्नी विधवा नहीं होती। अतः उसे सुहागके चिह्न नहीं छोड़ने चाहिये।

१४. बहनों-माताओंको चाहिये कि वे अपने पतिके सिवाय दूसरे पुरुषका स्पर्श न करें। साधु-सन्त या ब्राह्मणको भी दूरसे जमीनपर माथा टेककर प्रणाम करें। इससे स्त्रीका तेज बढ़ता है, शक्ति बढ़ती है, प्रभाव बढ़ता है, शान्ति बढ़ती है, पातिव्रतधर्मका पालन होता है, लोक-परलोक सबमें

लाभ होता है।

१५. स्त्रीको कोई गुरु नहीं बनाना चाहिये। अगर बनाया हो तो छोड़ देना चाहिये। स्त्रीको पतिके सिवाय किसी भी पुरुषसे किसी प्रकारका भी सम्बन्ध नहीं जोड़ना चाहिये। वर्तमान समयमें स्त्रीके लिये गुरु बनाना अर्थात् किसी भी परपुरुषसे सम्बन्ध जोड़ना अनर्थका मूल है।

१६. ऑपरेशन द्वारा प्रसव कभी नहीं कराना चाहिये। यह बहुत ही खराब चीज है! इससे शरीर कमजोर होता है तथा आयु कम होती है। माँके पेटमें जैसा ताकतवर शरीर बनता है, वैसा बाहर नहीं बनता। अगर दस, साढ़े दस या ग्यारह महीना भीतर रह जाय तो शरीर बहुत बलवान्, मजबूत होगा। आजकल ऑपरेशन करके निकालते हैं तो उसे कमजोर करते हैं। यह महान् अनर्थ है!

१७. जो स्त्री चक्की चलाती है, उसे प्रसवके समय पीड़ा नहीं होती और उसका स्वास्थ्य भी सदा ठीक रहता है।

१८. दूध पिलानेवाली स्त्रीको पतिका संग नहीं करना चाहिये। ऐसा करनेसे दूध दूषित हो जाता है, जिसको पीनेसे बच्चा बीमार हो जाता है।

१९. स्त्रियोंको दण्डवत् प्रणाम नहीं करना चाहिये।

२०. पहले हमारी माताओंके दो काम खास थे—सुबह जल्दी उठकर चक्कीमें आटा पीसना और गायोंकी सेवा करना। इससे उनका शरीर ठीक रहता था और वे बीमार नहीं पड़ती थीं। आज ये दोनों काम छोड़नेसे जवान बहनें भी बीमार रहती हैं।

२१. स्वयंवर करनेवाली अर्थात् अपनी मरजीसे विवाह करनेवाली सब लड़कियोंने प्रायः दुःख पाया है। अतः अपनी मरजीसे विवाह नहीं करना चाहिये।

२२. वर्तमान समयमें साधन-भजन करनेके लिये लड़कियोंको विवाह न करनेकी सम्मति मैं नहीं देता हूँ। वे अविवाहित रहकर आध्यात्मिक उन्नति कर सकें—ऐसा आजकल होना कठिन है। इसलिये उन्हें घरमें रहते हुए ही साधन करना चाहिये। घरसे बाहर जाकर वे ठीक कर लेंगी—यह असम्भव-जैसी बात है। वे माँ-बापके पासमें, भाईके पासमें उनकी देख-रेखमें रहें और भजन करें तो कर सकती हैं।

बालकोंके लिये उपयोगी

१. बालक-बालिकाओंको दो बातें याद रखनी चाहिये—बड़ोंके सामने बोलना नहीं और वे जैसा कहें, वैसा तुरन्त कर देना।

२. घरमें बच्चोंसे प्रतिदिन एक-डेढ़ घण्टा भगवन्नामका कीर्तन करवाओ तो उनकी सद्बुद्धि होगी और दुर्बुद्धि दूर होगी।

३. छोटे गरीब बच्चोंको मिठाई, खिलौने आदि देकर राजी करनेसे बहुत लाभ होता है और शोक-चिन्ता मिटते हैं, कष्ट दूर होता है। इसमें इतनी शक्ति है कि आपका भाग्य बदल सकता है! जिनका हृदय कठोर हो, वे यदि छोटे-छोटे गरीब बच्चोंको मिठायी खिलायें और उन्हें खाते हुए देखें तो उनका हृदय इतना नरम हो जायगा कि एक दिन वे रो पड़ेंगे!

४. बालकोंको ईसाई स्कूलोंमें कभी नहीं पढ़ाना चाहिये। आपलोग बालकोंको ईसाईयोंके स्कूलोंमें भेजते हो, जिससे वे भीतरसे ईसाई बन जाते हैं। अतः आपलोग अपने स्कूल बनाओ और उसमें बालकोंको अपने धर्मकी, गीता-रामायणकी शिक्षा दो। उसमें अच्छे शिक्षकोंको रखो। आपके बालक ठीक होंगे, तभी देशकी उन्नति होगी।

५. रामायणका पाठ करनेसे बुद्धि विकसित होती है। रामायणका नवाह्न पाठ करनेवाला विद्यार्थी परीक्षामें कभी फेल नहीं होता।

६. पति-पत्नीमें परस्पर कलह होता हो तो उस समय बच्चोंको माँका पक्ष लेना चाहिये, नहीं तो चुप रहना चाहिये।

७. माता-पिता, गुरु आदिकी आज्ञाका पालन करनेके समान कोई सेवा नहीं है। बड़ोंकी आज्ञाके अनुसार काम करनेसे लौकिक और पारलौकिक दोनों लाभ होते हैं। आज्ञा-पालन करनेके तीन भेद हैं। एक नंबरकी बात यह है कि आज्ञा मिले कि अमुक काम करना है तो चट उठकर वह काम कर दे। कहनेवालेके वचनोंको नीचे नहीं गिरने दे। थोड़ी देर बाद उठकर आज्ञा-पालन करनेसे आज्ञा-पालनका वह फायदा नहीं होता; क्योंकि वचन नीचे गिर गया। इसलिये आज्ञा-पालनमें देर करना दो नंबरकी बात है। आज्ञाके अनुसार काम न करना, जवाब दे देना तीन नंबरकी बात है।

८. पन्द्रहसे चालीस वर्षतककी अवस्था साधन करनेके लिये विशेष है। साधन करे तो यह 'साधन-पचीसी' है, अन्यथा 'गदह-पचीसी' है। इस अवस्थामें जो भजन नहीं करता, वह बुढ़ापेमें भजन कर ही नहीं सकता। भजनमें उसका मन ही नहीं लगेगा।

९. किसी बालकका स्वभाव खराब हो तो जब वह गहरी नींदमें सोया हो, तब उसके श्वासोंके सामने अपना मुख करके धीरेसे कहें कि 'तुम्हारा स्वभाव बड़ा अच्छा है, तुम्हारेमें क्रोध नहीं है' आदि। कुछ दिन ऐसा करनेसे उसका स्वभाव सुधरने लगेगा।

१०. अगर बेटेका स्वभाव ठीक नहीं हो तो उसको अपना बेटा न मानकर, उसमें सर्वथा अपनी ममता छोड़कर उसको सच्चे हृदयसे भगवान्‌के अर्पण कर दें, उसको भगवान्‌का ही मान लें तो उसका स्वभाव सुधर जायगा।

११. बालक ज्यादा जिद्दी हो तो जिस समय वह प्रसन्न हो, जिद न करता हो, उस समय उसके कानमें कहें कि जिद करनेका स्वभाव अच्छा नहीं है, बुरा है। भले ही वह इस बातको न समझे, पर इसका असर उसपर पड़ेगा; क्योंकि यह हितकी बात है, और अपना हित हरेक व्यक्ति चाहता है।

गायके प्रति कर्तव्य

१. हमारे देशकी गायें सौम्य और सात्त्विक होती हैं, इसलिये उनका दूध भी सात्त्विक होता है, जिसे पीनेसे बुद्धि तीक्ष्ण होती है और स्वभाव भी सौम्य, शान्त होता है। विदेशी गायोंका दूध तो ज्यादा होता है, पर उनके दूधमें उतनी सात्त्विकता नहीं होती तथा उनमें गुस्सा भी ज्यादा होता है। अतः उनका दूध पीनेसे मनुष्यका स्वभाव भी क्रूर होता है। विदेशी गायका गलकम्बल और कन्धा—दोनों ही नहीं होते; अतः वास्तवमें वह गाय नहीं है, प्रत्युत 'गवय' (गाय-जैसा

एक पशु) है। इसलिये देसी गायका ही दूध पीना चाहिये।

२. दूधके लिये गायको सुई लगाना गौहत्यासे भी बढ़कर घोर पाप है। कारण कि गौहत्यामें तो गाय एक ही बार दु:ख पाती है, पर सुई लगानेसे वह बार-बार दु:ख पाती है! सुई लगाकर दुहा गया दूध गायके खूनके समान है*। ऐसे दूधसे बचना चाहिये।

३. गायके बछड़ा-बछड़ीको दूध न पिलाकर खुद दूध पी लेना ठीक नहीं है। यह अन्याय है! अगर बछड़ीको गायका पर्याप्त दूध पिलाया जाय तो गाय बननेपर उसका दूध भी ज्यादा होगा। बछड़ीको कम दूध दोगे तो आगे उसका दूध ज्यादा नहीं होगा। अत: बछड़ा-बछड़ीको दूध पिलाकर ही खुद दूध पीना चाहिये।

४. गायकी सेवा करनेसे सब कामनाएँ सिद्ध होती हैं। रोजाना सुबह-शाम गायको सहलानेसे, उसकी पीठ आदिपर हाथ फेरनेसे, पैर दबानेसे गाय प्रसन्न होती है। गायके प्रसन्न होनेपर साधारण रोगोंकी तो बात ही क्या है, बड़े-बड़े असाध्य रोग भी मिट जाते हैं। लगभग बारह महीनेतक करके देखना चाहिये।

५. गायके दूध, घी, गोबर-गोमूत्रमें जीवनी-शक्ति रहती है। गायके घीके दीपकसे शान्ति मिलती है। गायका घी लेनेसे विषैली तथा नशीली वस्तुका असर नष्ट हो जाता है और बुद्धि तेज होती है। परन्तु अन्त:करण अशुद्ध होनेके कारण आजकल अच्छी चीज भी बुरी लगती है, गायके घीसे भी दुर्गन्ध आती है!

६. बूढ़ी गायका मूत्र तेज होता है और आँतोंमें घाव कर देता है। परन्तु दूध पीनेवाली बछड़ीका मूत्र सौम्य होता है; अत: वही लेना चाहिये।

७. गायका संकरीकरण नहीं करना चाहिये। यह सिद्धान्त है कि शुद्ध वस्तुमें अशुद्ध वस्तु मिलानेसे अशुद्धकी ही प्रधानता हो जाती है; जैसे—छाने हुए जलमें अनछाने जलकी कुछ बूँदें डालनेसे सब जल अनछाना हो जाता है।

८. पशु-पक्षियोंको अपनी जूठन दे सकते हैं, पर गायको जूठन नहीं देनी चाहिये।

शुभाशुभ

१. शकुन मंगल अथवा अमंगल-'कारक' नहीं होते, प्रत्युत मंगल अथवा अमंगल-'सूचक' होते हैं। तात्पर्य है कि जितने भी शकुन होते हैं, वे किसी अच्छी या बुरी घटनाके होनेमें निमित्त नहीं होते अर्थात् वे किसी घटनाके निर्माता नहीं होते, प्रत्युत भावी घटनाकी सूचना देनेवाले होते हैं। शकुन बतानेवाले प्राणी भी वास्तवमें शकुनोंको बताते नहीं हैं; किन्तु उनकी स्वाभाविक चेष्टासे शकुन सूचित होते हैं।

२. पुरुषकी बायीं आँख फड़कना अशुभ होता है। परन्तु बायीं आँख यदि ऊपरसे फड़के तो शुभ

---

* आजकल गाय-भैंस दुहनेसे पहले अधिक दूध पानेके लोभसे उन्हें 'ऑक्सीटोसिन' नामक इंजेक्शन लगाया जाता है। इस खतरनाक रसायनका कुछ अंश दूधमें भी आ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप विकलांगता, मन्दबुद्धि, हृदय, जिगर, गुर्दे ओर पेटकी बीमारियाँ तथा अनेक स्त्रीरोग पैदा होते हैं। यह बात अनेक समाचार-माध्यमोंसे भी प्रकट हो चुकी है।

होती है और नीचेसे फड़के तो अशुभ होती है। कानकी तरफवाला कोना फड़के तो अशुभ होता है और नाककी तरफवाला कोना फड़के तो शुभ होता है।

३. मंगलवारको नया वस्त्र नापना, सिलना तथा पहनना नहीं चाहिये।

४. कहीं जाते समय रास्तेमें गाय आ जाय तो उसे अपनी दाहिनी तरफ करके निकलना चाहिये। दाहिनी तरफ करनेसे उसकी परिक्रमा हो जाती है।

५. एक-दूसरेके विपरीत दिशामें लिखे गये वाक्य अशुभ होते हैं। इनको 'जुंझारू वाक्य' कहते हैं।

६. कमीज, कुरते आदिमें बायाँ भाग (बटन लगानेका फीता आदि) ऊपर नहीं आना चाहिये। हिन्दू-संस्कृतिके अनुसार वस्त्रका दाहिना भाग ऊपर और बायाँ भाग नीचे आना चाहिये।

७. मंगल भूमिका पुत्र है। अतः मंगलवारको भूमि नहीं खोदनी चाहिये, अन्यथा अनिष्ट होता है।

८. कहीं स्वर्ण पड़ा हुआ मिल जाय तो उसको कभी उठाना नहीं चाहिये।

९. यदि बुखार हो तो छींक नहीं आती। छींक आ जाय तो समझो बुखार गया! छींक आना बीमारीके जानेका शुभ शकुन है।

रोग और आरोग्य

१. विदेशी लोग दवापर जोर देते हैं, पर हम पथ्यपर जोर देते हैं*।

२. कुपथ्यका त्याग और पथ्यका सेवन करना तथा संयमसे रहना—ये तीनों बातें दवाइयोंसे भी बढ़कर रोग दूर करनेवाली हैं।

३. जहाँतक हो सके, किसी भी रोगमें ऑपरेशन नहीं कराना चाहिये। दवाओंसे चिकित्सा करनी चाहिये। ऑपरेशन करानेसे शरीरकी हानि होती है, कमजोरी आती है और आयु कम होती है।

४. एक ही दवा लम्बे समयतक नहीं लेनी चाहिये। बीचमें कुछ दिन उसे छोड़ देना चाहिये। निरन्तर लेनेसे वह दवा आहार (भोजन)-की तरह हो जाती है।

५. वास्तवमें प्रारब्धसे रोग बहुत कम होते हैं। ज्यादा रोग कुपथ्यसे अथवा असंयमसे होते हैं। कुपथ्य छोड़ दें तो रोग बहुत कम हो जायँगे। ऐसे ही प्रारब्धसे दुःख बहुत कम होता है। ज्यादा दुःख मूर्खतासे, राग-द्वेषसे, खराब स्वभावसे होता है।

६. चिन्तासे कई रोग होते हैं। कोई रोग हो तो वह चिन्तासे बढ़ता है। चिन्ता न करनेसे रोग जल्दी ठीक होता है।

७. जो रोगोंके कारण दुःखी, अप्रसन्न रहता है, उसपर रोग ज्यादा असर करते हैं। परन्तु जो भजन-स्मरण करता है, संयमसे रहता है, प्रसन्न रहता है, उसपर रोग ज्यादा असर नहीं करते। चित्तकी

---

* **पथ्ये सति गदार्त्तस्य किमौषधनिषेवणैः। पथ्येऽसति गदार्त्तस्य किमौषधनिषेवणैः॥**

(वैद्यजीवनम् १। १०)

'पथ्यसे रहनेपर रोगी व्यक्तिको औषध-सेवनसे क्या प्रयोजन? और पथ्यसे न रहनेपर रोगी व्यक्तिको औषध-सेवनसे क्या प्रयोजन?'

प्रसन्नतासे उसके रोग नष्ट हो जाते हैं।

८. औषधसे लाभ न हो तो भगवान्‌को पुकारना चाहिये। एकान्तमें बैठकर कातर-भावसे, रोकर भगवान्‌से प्रार्थना करें तो जो काम औषधसे नहीं होता, वह प्रार्थनासे हो जाता है। मन्त्रोंमें, अनुष्ठानोंमें उतनी शक्ति नहीं है, जितनी शक्ति प्रार्थनामें है। प्रार्थना जपसे भी तेज है।

९. कुपथ्यजन्य रोग दवाईसे मिट सकता है; परन्तु प्रारब्धजन्य रोग दवाईसे नहीं मिटता। महामृत्युंजय आदिका जप और यज्ञ-यागादि अनुष्ठान करनेसे प्रारब्धजन्य रोग भी कट सकता है, अगर अनुष्ठान प्रबल हो तो।

१०. बच्चोंको तथा बड़ोंको भी नजर लग जाती है। नजर किसी-किसीकी ही लगती है, सबकी नहीं। कइयोंकी दृष्टिमें जन्मजात दोष होता है, और कई जान-बूझकर भी नजर लगा देते हैं। नजर उतारनेके ये उपाय हैं—

क) साबत लालमिर्च और नमक व्यक्तिके सिरपर घुमाकर अग्निमें जला दें। नजर लगी होगी तो गन्ध नहीं आयेगी।

ख) दाहिने हाथकी मध्यमा-अनामिका अंगुलियोंको हथेलीकी तरफ मोड़कर तर्जनी और कनिष्ठा अंगुलियोंको परस्पर मिला लें और व्यक्तिके सिरसे पैरतक झाड़ा दें। परन्तु ये दोनों अंगुलियाँ सबकी नहीं मिलतीं।

ग) जिसकी नजर लगी हो, वह उस व्यक्तिको थू-थू-थू कर दे तो भी नजर उतर जाती है।

११. जो गरमीके दिनोंमें गरमी सह लेते हैं, उनको सरदीके दिनोंमें सरदी नहीं सताती और जो सरदीके दिनोंमें सरदी सह लेते हैं, उनको गरमीके दिनोंमें गरमी नहीं सताती। कारण कि जो गरमीको सहता है, वही सरदीको सह सकता है और जो सरदीको सहता है, वही गरमीको सह सकता है। अतः गरमीके दिनोंमें गरमी और सरदीके दिनोंमें सरदी सहनेसे दोनोंका असर नहीं पड़ता, शरीर मजबूत हो जाता है।

रोगीके प्रति कर्तव्य

१. रोगी व्यक्तिको भगवान्‌का स्मरण कराना सबसे बड़ी और सच्ची सेवा है।

२. यदि रोगी व्यक्ति कुछ भी खा-पी न सके तो गेहूँ आदिको अग्निमें डालकर उसका धुआँ देना चाहिये। उस धुएँसे रोगीको पुष्टि मिल जायगी।

३. भगवन्नाम अशुद्ध अवस्थामें भी लेना चाहिये। कारण कि बीमारीमें प्रायः अशुद्धि रहती है। यदि नाम लिये बिना मर गये तो क्या दशा होगी? क्या अशुद्ध अवस्थामें श्वास नहीं लेते? नामजप तो श्वाससे भी अधिक मूल्यवान् है।

४. यदि कोई रोगी व्यक्ति कई दिनोंसे एक ही कमरेमें लेटा हो और रोग ठीक न हो रहा हो तो उसका कमरा, बिस्तर आदि बदल देना चाहिये। ऐसा करनेसे वह रोगमुक्त हो सकता है।

मरणासन्नके प्रति कर्तव्य

१. अधिक बीमार अथवा मरणासन्न व्यक्तिको सांसारिक लाभ-हानिकी बातें नहीं सुनानी चाहिये। छोटे बच्चोंको उसके पास नहीं ले जाना चाहिये; क्योंकि बच्चोंमें स्नेह अधिक होनेसे उसकी वृत्ति उनमें चली जायगी।

२. मरणासन्न व्यक्तिके सिरहाने गीताजी रखें। दाह-संस्कारके समय उस गीताजीको गंगाजीमें बहा दें, जलायें नहीं।

३. यदि रोगीके मस्तकपर लगाया चन्दन जल्दी सूख जाय तो समझे कि अभी वह जल्दी मरनेवाला नहीं है। मृत्युके समीप पहुँचे व्यक्तिके मस्तकपर लगा चन्दन जल्दी नहीं सूखता; क्योंकि उसके मस्तककी गरमी चली जाती है, मस्तक ठण्डा हो जाता है।

४. अस्पतालमें मरनेवालेकी प्रायः सद्गति नहीं होती। अतः मरणासन्न व्यक्ति यदि अस्पतालमें हो तो उसे घर ले आना चाहिये।

५. मरणासन्न व्यक्तिको होश हो, समझ हो तो गीता सुनाओ। होश न हो तो भगवन्नाम सुनाओ।

६. अगर मरणासन्न व्यक्तिकी गीताजीमें रुचि हो तो उसको गीताजीका आठवाँ अध्याय सुनाना चाहिये; क्योंकि इस अध्यायमें जीवकी सद्गतिका विशेषतासे वर्णन आया है। इसको सुननेसे उसको भगवान्‌की स्मृति हो जाती है।

७. मरणासन्न व्यक्तिके पास भगवन्नामका कीर्तन करें। उसको भगवान्‌पर चढ़ाया तुलसीदल गंगाजलमें मिलाकर दें। उसके पास तुलसीका गमला पासमें रखें। सफेद सरसोंके दाने बिखेर दें। इससे अपवित्रता नष्ट होकर पवित्रता आती है, भगवान्‌में मन लगता है।

मृतात्माके प्रति कर्तव्य

१. शवके दाह-संस्कारके समय मृतकके गलेमें पड़ी तुलसीकी माला न निकालें, पर गीताजी हो तो निकाल देनी चाहिये।

२. श्राद्ध आदि कर्म भारतीय तिथिके अनुसार करने चाहिये, अँग्रेजी तिथिके अनुसार नहीं। भारत आजाद हो गया, पर भीतरसे गुलामी नहीं गयी! लोग अँग्रजी दिनांक तो जानते हैं, पर तिथि जानते ही नहीं!

३. किसी व्यक्तिकी विदेशमें मृत्यु हो जाय तो उसके श्राद्ध आदिमें वहाँकी तिथि न लेकर भारतकी तिथि ही लेनी चाहिये अर्थात् उसकी मृत्युके समय भारतमें जो तिथि थी, उसी तिथिमें श्राद्ध आदि कार्य करने चाहिये।

४. घरमें किसीकी मृत्यु होनेपर सत्संग, मन्दिर और तीर्थ—इन तीनोंमें शोक नहीं रखना चाहिये अर्थात् इन तीनों जगह जरूर जाना चाहिये। इनमें भी सत्संग विशेष है। सत्संगसे शोकका नाश होता है।

५. किसीकी मृत्युसे दुःख होता है तो इसके दो कारण हैं—उससे सुख लिया है और उससे आशा रखी है। मृतात्माकी शान्ति और अपना शोक दूर करनेके लिये तीन उपाय करने चाहिये—१) जब-जब मृतात्माकी याद आये, तब-तब उसको भगवान्‌के चरणोंमें बैठा देखें, २) उसके

निमित्त गीता, रामायण, भागवत, विष्णुसहस्रनाम आदिका पाठ करायें, और ३) गरीब बालकोंको मिठाई बाँटें और उन्हें खाते हुए देखें।

६. घरका कोई मृत व्यक्ति बार-बार स्वप्नमें आये तो उसके निमित्त गीता-रामायणका पाठ करें, नामजप करें, गरीब बालकोंको मिठाई खिलायें। किसी अच्छे ब्राह्मणसे श्राद्ध करवायें। उसी मृतात्माकी अधिक याद आती है, जिसका हमपर ऋण है। उससे जितना सुख-आराम लिया है, उससे अधिक सुख-आराम उसे न दिया जाय, तबतक उसका ऋण रहता है। जबतक ऋण रहेगा, तबतक उसकी याद आती रहेगी।

७. श्राद्धका अन्न घरके लोग खायें तो कोई दोष नहीं है; क्योंकि मरनेवाला अपना ही स्वजन है। परन्तु दूसरोंको कभी नहीं खाना चाहिये। अन्न बच जाय तो ब्राह्मणोंसे पूछकर जैसा वे कहें, वैसा उसका उपयोग कर दे। मृत्युके बाद तीसरे और बारहवें दिनका अन्न बहुत अशुद्ध होता है; अतः बचे हुए अन्नको पृथ्वीमें गाड़ देना चाहिये। वार्षिक पितृपक्षमें होनेवाले श्राद्धका अन्न भी दूसरेको नहीं खाना चाहिये। श्राद्धका भोजन ब्राह्मणको ही खिलानेका विधान है, गरीबों आदिका नहीं।

८. यह नियम है कि दुःखी व्यक्ति ही दूसरेको दुःख देता है। यदि कोई प्रेतात्मा दुःख दे रही है तो समझना चाहिये कि वह बहुत दुःखी है। अतः उसके हितके लिये गया-श्राद्ध करा देना चाहिये।

९. शवके साथ छेड़छाड़ नहीं करनी चाहिये। शवका कोई अंग काटनेसे अगले जन्ममें वह अंग नहीं मिलता। अंग मिलता भी है तो उसमें कमी अथवा चिह्न रहता है। अतः मृत्युके बाद नेत्रदान करनेको मैं सर्वथा अनुचित मानता हूँ।

१०. किसीकी भी मृत्युपर खुशी नहीं मनानी चाहिये।

कर्तव्यका निर्णय

१. किसी कार्यको करें या न करें—इस विषयका निर्णय करना हो तो किसी दिन अपने इष्टका खूब भजन-ध्यान, नामजप, कीर्तन करें। फिर कागजकी दो पुड़िया बनायें। एकमें लिखें 'काम करें' और दूसरीमें लिखें 'काम न करें'। फिर किसी बच्चेसे कोई एक पुड़िया उठवायें और उसे पढ़कर तदनुसार कार्य करें।

२. किंकर्तव्यविमूढ़ होनेकी दशामें चुप, शान्त हो जायँ और भगवान्‌को याद करें तो समाधान मिल जायगा।

३. कोई काम करना हो तो मनसे भगवान्‌को देखो। भगवान् प्रसन्न दीखें तो वह काम करो और प्रसन्न न दीखें तो वह काम मत करो कि भगवान्‌की आज्ञा नहीं है। एक-दो दिन करोगे तो इसका भान होने लगेगा।

४. एक सज्जन हरेक काममें भगवान्‌की आज्ञा लेते थे। वे गलेमें पड़ी मालाको पकड़कर मेरु तक गिनते। विषम संख्या (१,३,५ आदि) आ गयी तो काम करना है, सम संख्या (२,४,६ आदि) आ गयी तो काम नहीं करना है।

प्रकीर्ण

१. कोई भी काम करें तो भगवान्‌को याद करके करें। कहीं भी जाना हो तो भगवान्‌का नाम लेकर, चार बार '**नारायण**' नामका उच्चारण करके घरसे निकलें। कुछ भी लिखें तो पहले ऊपर भगवान्‌का नाम लिखें। जिस पत्रके ऊपर भगवान्‌का नाम नहीं लिखा हो, वह बिना सिरवाले पिशाचकी तरह है!

२. कुत्ता अपनी तरफ भौंकता हो तो दोनों हाथोंकी मुट्ठी बन्द कर लें। कुछ ही देरमें वह चुप हो जायगा।

३. जहाँतक हो सके, साधकको अपना पहना हुआ वस्त्र दूसरेको नहीं देना चाहिये। देनेसे अपनी स्थिति जाती है।

४. जहाँ पानी जमा हो, उसपरसे यथासम्भव गाड़ी न ले जायँ; क्योंकि जमा हुए पानीमें असंख्य जीव-जन्तु पैदा हो जाते हैं। गाड़ी ले जानेपर उनकी हिंसाका पाप लगेगा।

५. सत्संग, कथा-कीर्तन आदिमें (दूसरोंके सामने) भावुक होकर नाचना अथवा रोना नहीं चाहिये। अपनी भक्तिको दिखाना नहीं चाहिये, प्रत्युत पचाना चाहिये। यदि पचा न सकें तो एकान्तमें चले जाओ, फिर भले ही नाचो।

६. सत्संग अथवा कीर्तनके बीचमें नहीं उठना चाहिये। यह महान् अपराध है। कारण कि इससे सत्संग अथवा कीर्तनका अपमान होता है और उसमें पहले-जैसा रस नहीं रहता।

७. भगवान्‌का चित्र अथवा भगवान्‌का नाम पैरोंके नीचे नहीं आना चाहिये। इतना ही नहीं, अक्षर भी पैरोंके नीचे नहीं आने चाहिये।

८. वर्षाके जलसे पेड़-पौधे प्रसन्न हो जाते हैं। इसलिये जब वर्षा आये, तब छतके नीचे रखे हुए पौधोंके गमलोंको खुलेमें (वर्षाके नीचे) रख देना चाहिये।

९. जहाँ भूत-प्रेतका भय लगे, वहाँ गीता, रामायण रखो। जिन पुस्तकोंका सन्त-महात्माओंने पाठ किया है, उन्हें रखो। उन पुस्तकोंको रखनेमात्रसे भूत-प्रेत नहीं आते।

१०. पितरोंकी प्रसन्नताके निमित्तसे छोटे ब्राह्मण-बालकोंको मिठायी, खिलौने आदि मनपसन्द वस्तुएँ देनेसे पितर प्रसन्न होते हैं और उससे पितृदोष मिट जाता है।

११. सिनेमा देखनेसे चरित्र, समय, नेत्र-शक्ति और धन—इन चारोंका नाश होता है।

१२. धार्मिक सिनेमा भी नहीं देखना चाहिये; क्योंकि फिल्म-निर्माताकी दृष्टि पैसोंकी तरफ तथा साधारण लोगोंकी रुचिकी तरफ रहती है, सत्यकी ताफ नहीं। वे शास्त्रमें लिखी बातोंको तत्त्वसे नहीं समझते। शास्त्रमें जो आया है और सिनेमामें जो दिखाते हैं—दोनोंमें फर्क होनेके कारण धार्मिक सिनेमा देखनेसे नास्तिकता आती है।

१३. काम कम हो, समय अधिक हो और खर्चे (आवश्यकता)-से अधिक पैसा हो तो उसका पतन अवश्य होता है। समय अधिक खाली मिलनेसे साधुओंका और अधिक पैसे मिलनेसे गृहस्थोंका पतन होता है।

१४. जो बड़े आदमी होते हैं, श्रेष्ठ पुरुष होते हैं, उनको साक्षात् नामसे नहीं पुकारा जाता। उनके लिये तो 'आप', 'महाराज' आदि शब्दोंका प्रयोग होता है।

१५. शास्त्रमें आता है कि छींकके समय '**जीव**' कहे, गिरते समय '**उत्तिष्ठ**' कहे और जम्हाई लेते समय चुटकी बजाये।

१६. स्वर्णको मस्तकपर धारण नहीं करना चाहिये। इससे बुद्धि भ्रष्ट होती है।

१७. नीलका निषेध हिन्दूमात्रके लिये है। कारण कि इसमें धर्मविरोधी परमाणु हैं।

१८. सन्तोंकी वाणीमें अपनी तरफसे कोई शब्द कभी मिलाना नहीं चाहिये। वह भले ही कैसी ही हो, वही ठीक है। जैसे, गीतामें '**एतन्मे संशयम्**' (६। ३९) लिखा है, जो व्याकरणकी दृष्टिसे अशुद्ध है। परन्तु उसको वैसा ही लिखा जाता है। किसी भी टीकाकारने इसको छेड़ा नहीं है। व्याकरणकी दृष्टिसे शुद्ध न होनेपर भी इनको अशुद्ध नहीं कह सकते। इनको इधर-उधर करनेका हमें अधिकार नहीं है। ऐसा करना बिलकुल अनधिकार चेष्टा है।

१९. पुस्तक उल्टी नहीं रखनी चाहिये। इससे उस पुस्तकका निरादर होता है। वास्तवमें सभी वस्तुएँ भगवत्स्वरूप होनेसे चिन्मय हैं। अतः किसी भी वस्तुको जड़ समझकर उसका निरादर नहीं करना चाहिये।

===::0::===

अमृत-बिन्दु

१. संसारमें जो वर्ण-आश्रमकी मर्यादा है, 'ऐसा काम करना चाहिये और ऐसा नहीं करना चाहिये'—यह जो विधि-निषेधकी मर्यादा है, इसको महापुरुषोंने जीवोंके कल्याणार्थ व्यवहारके लिये मान्यता दी है।

२. कर्तव्य उसे कहते हैं, जिसे सुखपूर्वक कर सकते हैं, जिसे अवश्य करना चाहिये अर्थात् जो करनेयोग्य है और जिसे करनेसे उद्देश्यकी सिद्धि अवश्य होती है। जो नहीं कर सकते, उसे करनेकी जिम्मेवारी किसीपर नहीं है और जिसे नहीं करना चाहिये, उसे करना ही नहीं है। जिसे नहीं करना चाहिये, उसे न करनेसे दो अवस्थाएँ अवश्य आती हैं—निर्विकल्प अवस्था अर्थात् कुछ न करना अथवा जिसे करना चाहिये, उसे करना।

३. कर्तव्यका अर्थ होता है—अपने स्वार्थका त्याग करके दूसरोंका हित करना अर्थात् दूसरोंकी उस शास्त्रविहित न्याययुक्त माँगको पूरा करना, जिसे पूरा करनेकी सामर्थ्य हमारेमें है। इस प्रकार कर्तव्यका सम्बन्ध परहितसे है।

४. कर्तव्यका पालन करनेमें सब स्वतन्त्र और समर्थ हैं, कोई पराधीन और असमर्थ नहीं है। हाँ, प्रमाद और आलस्यके कारण अकर्तव्य करनेका बुरा अभ्यास (आदत) हो जानेसे तथा फलकी इच्छा रहनेसे ही वर्तमानमें कर्तव्य-पालन कठिन मालूम देता है, अन्यथा कर्तव्य-पालनके समान सुगम कुछ नहीं है।

५. मनुष्य प्रत्येक परिस्थितिमें स्वतन्त्रतापूर्वक कर्तव्यका पालन कर सकता है।

६. कोई भी काम करना हो तो वह धर्मको सामने रखकर ही करना चाहिये। प्रत्येक कार्य सबके हितकी दृष्टिसे ही करना चाहिये, केवल अपने सुख-आरामकी दृष्टिसे नहीं।

७. जिसमें अपने सुखकी इच्छाका त्याग करके दूसरेको सुख पहुँचाया जाय और जिसमें अपना भी हित हो तथा दूसरेका भी हित हो, वह 'कर्तव्य' कहलाता है।

८. दूसरोंके हितमें ही अपना हित है। दूसरोंके हितसे अपना हित अलग मानना ही गलती है। इसलिये लौकिक तथा शास्त्रीय जो कर्म किये जायँ, वे सब-के-सब लोक-हितार्थ होने चाहिये।

९. वर्तमान समयमें घरोंमें, समाजमें जो अशान्ति, कलह, संघर्ष देखनेमें आ रहा है, उसमें मूल कारण यही है कि लोग अपने अधिकारकी माँग तो करते हैं, पर अपने कर्तव्यका पालन नहीं करते।

१०. जैसे शरीरका एक भी पीड़ित (रोगी) अंग ठीक होनेपर सम्पूर्ण शरीरका स्वतः हित होता है, ऐसे ही अपने कर्तव्यका ठीक-ठीक पालन करनेवाले मनुष्यके द्वारा सम्पूर्ण सृष्टिका स्वतः हित होता है।

११. जहाँ निष्कामभावसे कर्तव्य-कर्मका पालन किया जाता है, वहाँ परमात्मा रहते हैं। अतः परमात्मप्राप्ति चाहनेवाले मनुष्य अपने कर्तव्य-कर्मोंके द्वारा उन्हें सुगमतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं।

१२. जब व्यक्ति कामना, ममता, आसक्ति और अहंताका त्याग करके अपने कर्तव्यका पालन करता है, तब उससे सम्पूर्ण सृष्टिमें स्वतः सुख पहुँचता है।

१३. अपनेमें कर्तृत्वाभिमान होनेसे ही दूसरोंके कर्तव्यपर दृष्टि जाती है और दूसरोंके कर्तव्यपर दृष्टि जाते ही मनुष्य अपने कर्तव्यसे गिर जाता है; क्योंकि दूसरेका कर्तव्य देखना अपना कर्तव्य नहीं है।

१४. कोई भी कर्तव्य-कर्म छोटा या बड़ा नहीं होता। छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा कर्म कर्तव्यमात्र समझकर (सेवाभावसे) करनेपर समान ही है। देश, काल, परिस्थिति, अवसर, वर्ण, आश्रम, सम्प्रदाय आदिके अनुसार जो कर्तव्यकर्म सामने आ जाय, वही कर्म बड़ा होता है।

१५. जैसे शरीरका कोई भी पीड़ित (रोगी) अंग ठीक हो जानेपर सम्पूर्ण शरीरका हित होता है, ऐसे ही मर्यादामें रहकर प्राप्त वस्तु, समय, परिस्थिति आदिके अनुसार अपने कर्तव्यका पालन करनेवाले मनुष्यके द्वारा सम्पूर्ण संसारका स्वतः हित होता है।

१६. दूसरोंके कर्तव्यसे अपने कर्तव्यमें कमी दीखनेपर भी अपना कर्तव्य ही कल्याण करनेवाला है। अतः किसी भी अवस्थामें अपने कर्तव्यका त्याग नहीं करना चाहिये।

१७. प्रतिकूल-से-प्रतिकूल परिस्थिति, वस्तु, व्यक्ति, घटना आनेपर भी साधक प्रसन्नतापूर्वक अपने कर्तव्यका पालन करता रहे—अपने कर्तव्यसे थोड़ा भी विचलित न हो तो यह सबसे बड़ी तपस्या है, जो शीघ्र सिद्धि देनेवाली होती है।

१८. जो शास्त्र पढ़े हुए नहीं हैं, उनको कर्तव्यका ज्ञान कैसे होगा? इसका समाधान है कि अगर उनका अपने कल्याणका उद्देश्य होगा तो अपने कर्तव्यका ज्ञान स्वतः होगा; क्योंकि आवश्यकता आविष्कारकी जननी है। अगर अपने कल्याणका उद्देश्य नहीं होगा तो शास्त्र पढ़नेपर भी कर्तव्यका ज्ञान नहीं होगा, उलटे अज्ञान बढ़ेगा कि हम अधिक जानते हैं।

१९. मनुष्यके मनमें ऐसा आता है कि मैं कर्तव्यका पालन करनेमें और सद्गुणोंको लानेमें असमर्थ हूँ। परन्तु वास्तवमें वह असमर्थ नहीं है। सांसारिक भोगोंकी आदत और पदार्थोंके संग्रहकी रुचि होनेसे ही असमर्थताका अनुभव होता है।

२०. मनुष्यका खास कर्तव्य है—अपना स्वभाव ठीक करना अर्थात् निषिद्ध कर्मोंके स्वभावका त्याग करके विहित कर्मोंके स्वभावके अनुसार आचरण करना।

('साधक-संजीवनी' से संकलित)

===::0::===

परमश्रद्धेय श्रीस्वामीजी महाराजके जीवनसे प्राप्त शिक्षाएँ

संसारमें दो प्रकारके जीवन्मुक्त महापुरुष होते हैं—१) अवधूत कोटिके और २) आचार्य कोटिके। अवधूत कोटिके महापुरुष तो अवधूतोंके लिये ही आदर्श होते हैं, सम्पूर्ण मनुष्योंके लिये नहीं। परन्तु आचार्य कोटिके महापुरुष सम्पूर्ण मनुष्योंके लिये आदर्श होते हैं। परमश्रद्धेय श्रीस्वामीजी महाराज आचार्य कोटिके महापुरुष थे। इसलिये उनकी प्रत्येक क्रिया दूसरोंके लिये शिक्षाप्रद होती थी। हमने अपनी सीमित दृष्टिसे उनके जीवनसे जो शिक्षाएँ प्राप्त की हैं, उनका संक्षिप्त दिग्दर्शन पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत किया जाता है—

१. व्यक्तिपूजा (अपनी फोटो, पूजा, जीवनी आदि)-का सर्वथा निषेध।
२. किसी व्यक्ति अथवा सम्प्रदायका अनुयायी न होकर केवल सत्य-तत्त्वका अनुयायी होना।
३. जीवनमें किसी भी वस्तु-व्यक्तिकी पराधीनता नहीं कि इसके बिना काम नहीं चलेगा।
४. अपने सुख-आरामका त्याग करके दूसरोंके सुख-आरामका ध्यान रखना।
५. प्रतिकूलतामें विशेष प्रसन्न होना।
६. भोग तथा संग्रह-बुद्धिका सर्वथा त्याग।
७. सात्त्विक वस्तुओंके संरक्षण-संवर्धनकी विशेष चेष्टा करना।
८. अन्न, जल, औषध आदिमें पूर्णतः शुद्धि तथा सात्त्विकताका ध्यान रखना।
९. केवल देसी गायका दूध, घी आदि ही ग्रहण करना।
१०. किसी भी वस्तुका दुरुपयोग न करते हुए उसका पूरा सदुपयोग करना।
११. अन्न-जल-वस्त्रको कम-से-कम खर्च करना।
१२. समयकी प्रतिबद्धता।
१३. थोड़ा भी समय निरर्थक न जाय—इसका विशेष ध्यान रखना।
१४. किसी भी आवश्यक कार्यको 'फिर करेंगे'—इस प्रकार भविष्यके लिये न छोड़ना।
१५. कंचन-कामिनीका सर्वथा त्याग।
१६. स्वयं अमानी रहते हुए सबको सम्मान देना।
१७. अपना आग्रह न रखकर दूसरेकी बातका आदर करना।
१८. दूसरेके कल्याणके सिवाय किसीसे कोई मतलब न रखना।
१९. किसीसे कुछ भी न माँगना।
२०. आज्ञा न देनेका स्वभाव।
२१. किसीको अपने अधीन, अपना चेला न मानकर सबके साथ मित्रताका बर्ताव करना।
२२. अपनी वाणीका, वचनोंका विशेष ध्यान रखना।
२३. चौबीसों घण्टे सजग, सावधान रहना।

आजकलकी शिक्षाने लोगोंमें ऋषि-मुनियोंपरसे श्रद्धा हटा दी है। अतः उनके ऋषि-मुनि विदेशी हो गये हैं अर्थात् वे विदेशियोंकी बातका ज्यादा आदर करते हैं।

ये विधि-निषेध उनके लिये आवश्यक हैं, जो अपना कल्याण चाहते हैं। विदेशी लोगोंमें ऐसा विधि-निषेध नहीं देखा जाता; क्योंकि वे अपने कल्याणके उद्देश्यसे कार्य करते ही नहीं। विदेशी लोग इन बातोंको मानते नहीं—यह बात नहीं है, वे तो इन बातोंको जानते ही नहीं! ये बातें ऋषि-मुनियोंकी खोज है, जिनका प्रभाव अवश्य होता है। इन बातोंको माननेवालेमें विलक्षणता आती है।

—परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराज